भारतीय ज्ञान परम्परा

डॉ. विनोद श्रीराम जाधव
हिंदी विभागाध्यक्ष,
मत्स्योदारी शिक्षण संस्था द्वारा संचालित,
कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय,
अम्बड, जिला जालना, महाराष्ट्र
मोबाईल नम्बर—९७६५५५२२२५

स्वामी विवेकानंद ने कहा था-प्रत्येक राष्ट्र की एक आत्मा होती है | इंग्लॅण्ड की आत्मा स्वराज्य है, अमेरिका की आत्मा वैभव है, फ्रांस की आत्मा फैशन हैं, जापान की आत्मा तकनिक है इसी तरह भारत की आत्मा ज्ञान है | सभी देशों की आत्मा नश्वर है, किन्तु भारत की आत्मा अजर-अमर है | गीता में भी कहा गया है कि ज्ञान कभी भी मिटता नहीं, और ना ही मरता| यह सम्पूर्ण सृष्टि को पवित्र करता है | इसीलिए भारत में ज्ञान की उपासना, ज्ञानार्जन और ज्ञान परम्परा को अत्यधिक महत्व दिया गया है | ज्ञान के बिना मनुष्य, मनुष्य नहीं रहता है अपितु वह पशु-तुल्य होता है |

जैसा की संगोष्ठी में आये हुए विद्वान् अनेकानेक विषयों पर अपने बहुमूल्य विचार व्यक्त करेंगे| "भारतीय ज्ञान परम्परा" इस विषय को मैं अल्प बुद्धि से समझाने का प्रयत्न करूंगा | शीर्षक के अनुसार हम सबसे पहले "भारत" शब्द का अर्थ गहराई से जानेंगे | "भा" इस अक्षर का अर्थ "प्रकाश", "तेज" या "ज्ञान" होता है | और "रत" शब्द का अर्थ "लगे रहना" या "तल्लीन रहना" होता है | इस तरह से भारत शब्द का अर्थ—'जो ज्ञान के प्रकाश में तल्लीन है वही भारत है |' विश्व में भारत ही एक ऐसा देश है जो सब आज भी लालायित हैं | हमारी संस्कृति, ज्ञान परंपरा की यह एक ख़ास विशेषता हैं कि यह चिर पुरातन होते हुए भी चिर नूतन दिखलाई देती है| वैसे हमारा देश भी ज्ञान-विज्ञान की खोजों और अन्वेषण में पीछे नही है, फिर भी हमारे देश में अधिकांश जगह आज भी वैदिक संस्कृति का पालन होता है | परिवर्तन यह प्रकृति का नियम है इसी के अनुसार हमने भी हमारी सभ्यता व संस्कृति में कुछेक परिवर्तन अवश्य किये हैं |

अब हम 'ज्ञान' शब्द का विस्तृत रूप से अर्थ जानेंगे | भारत में ज्ञान की साधना करने की परम्परा अत्यंत प्राचीन समय से सृष्टि के आदिकाल से ही ज्ञान के शोध एवं अनुसंधान का केंद्र रहा है| भारत के ऋषि-मुनि और सिद्ध महात्माओं की ख्याति आज भी दुनिया भर में अपना एक विशिष्ट महत्व रखती है| इनके द्वारा संग्रहित व रचित वांग्मय में वेदों, स्मृतियों, ब्राम्हणों, अरण्यकों, उपनिषदों, आगम शास्त्र ग्रंथों और पुराणों जैसे अनुपम साहित्य को देख कर आश्चर्य होता है | हम मूल रूप में 'भारत' शब्द का अर्थ "ज्ञानोपासक" के रूप में ले सकते हैं |

प्राचीन काल से ही भारत की पहचान 'जगतगुरु' के रूप में रही है | आज भी हम विश्व में सभी राष्ट्रों से भारत की तुलना करे तो मन में विचार आता हैं कि ऐसा कौनसा तत्व है, जो भारत को अन्य देशों से अलग करता है...? या जिस पर हम गर्व करते हैं | तो निष्कर्ष में उत्तर यहीं रहेगा कि हमारी भारतीय प्राचीन संस्कृति और भारतीय ज्ञान परम्परा ही वे तत्व हैं जो हमें अन्य राष्ट्रों से महान बनाते हैं | यह भी सच हैं कि अन्य देश भौतिक सुख-सुविधा, विज्ञान, स्वास्थ, मशीनें, कल-पूर्जे, शिक्षा, और तकनिकी खोजों में बहुत आगे बढ़ चुके हैं, किन्तु हमारे जैसी संस्कृति, ज्ञान परंपरा और वैदिक साहित्य के लिए ये

रही है | भारतीय प्राचीन साहित्य का गहराई से अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि इसमें भारतीय सामाजिक जीवन के प्रत्येक पहलू के प्रसंगों का ब्यौरा विद्यमान है | साथ ही साथ शिक्षा को भी इसमें शामिल किया गया है | रौचक बात तो यह है कि भारत की प्राचीन परम्पराओं पर दूसरे देश नए दृष्टिकोण से अनुसंधान कर रहे हैं | इसीलिए मध्य काल की प्रचलित परम्पराएं जो हमने व्यर्थ घोषित कर दी थी, उन्हें फिर से शोधित किया जा रहा है | यही कारण है कि जन्म से पूर्व माँ के गर्भ में ही शिशु को ज्ञान देने की परम्परा को आज भी सत्य माना है और इसीलिए आज भी गर्भ संस्कार किये

जाते है | हमारे यहाँ वनस्पति और पेड़-पौधों में जीव की उपस्थिति मानी गयी है | तभी तो मधुर स्वर और संगीत से पेड़-पौधों का विकास अच्छे से होता है, यह धारणा भी सही सिद्ध हुई है | इससे स्पष्ट है कि भारतीय ज्ञान परम्परा जो बरसों से से जन-जन तक धर्म का आवरण चड़ा कर समझाई जाती थी आज वैज्ञानिक रहस्यों के साथ समझाई जाती है | ज्ञान का सीधा अर्थ- "किसी भी वस्तु या विषय को जानना, समझना और उसका अनुभव करना होता है | या हम यह भी कह सकते हैं कि किसी भी विषय को पूर्ण रूप से समझना, उसका पूरा पूरा अनुभव करना तथा समय आने पर उसका उचित तरीके से प्रयोग करना होता है |" कहते हैं कि "ज्ञान एक वर्तमान है, जिसका आविष्कार मनुष्य ही करता है |" होब्स ने कहा है–"ज्ञान ही शक्ति है |" विद्वानों के मतानुसार—"बुद्धि प्रश्न पूछती है, और ज्ञान उसका सही उत्तर देता है |" यह भी सत्य है की--"ज्ञान के समान कोई आँख नहीं, क्योंकि इसीसे हम अच्छे-बुरे का भेद करते हैं |" चाणक्य के अनुसार—"मनुष्य का सच्चा मित्र ज्ञान है, और कट्टर शत्रु अज्ञान है |" विद्वानों ने अज्ञान को किसी व्यक्ति के लिए ही नही अपितु सम्पूर्ण समाज के लिए भी बुरा बताया है, इससे सदैव हानि ही होती है | बौद्ध दर्शन के अनुसार—"ज्ञान वह है जो मनुष्य को सांसारिक दुखों से मुक्त करे |" सुकरात के अनुसार—"ज्ञान मनुष्य का सर्वोत्तम गुण है|" विलियम जेम्स के अनुसार—"ज्ञान व्यवहारिक प्राप्ति और सफलता का दूसरा नाम है |" सभी के विचारों के सार में हम ज्ञान के बारे में यही कह सकते हैं कि—"ज्ञान वह है जो सत्य है | ज्ञान में ज्ञाता का विश्वास होता है | ज्ञान अज्ञानता और अंधविश्वासों को दूर करता है | यह हमें अनुशाषित कर, हमारे चरित्र का निर्माण करता है | ज्ञान का मानव जीवन पर अत्यधिक महत्व है| इसके बगैर मानव पंगु है | इसी से हमारी बौद्धिक, तार्किक, मानसिक, काल्पनिक, स्मृति और निरीक्षण शक्तियों का विकास होता है | जैसे शंकर भगवान् की तीसरी आँख होती है इसी तरह मनुष्य की भी तीसरी आँख ज्ञान है, जो अगर सही मायने में खुलती है तो मनुष्य क्या –क्या कर सकता है इसका अंदाजा लगाना मुश्किल है | ज्ञान ही एक ऐसा अमूल्य धन है जिसे जितना बाँटते हैं उतना बढ़ता है | ज्ञान से विश्व का रहस्य खोजा जाता है |ज्ञान प्राप्त करने की और बांटने की कोई सीमा नहीं है| ज्ञान समय का परिणाम है | यह क्रमबद्धता से चलता है | यह एक ऐसी चेतना है जिससे मनुष्य का मनोबल बढ़ता है | अंत में हम इतना ही कहेंगे कि ज्ञान प्रेम तथा मानव स्वतन्त्रता के सिद्धांतों का आधार है |"(१)

ज्ञान, शिक्षा और बुद्धि जैसे आधारभूत तत्व मूलरूप से विद्या के अंतर्गत आते हैं| "विद्या" शब्द की उत्पत्ति 'विद' धातु से हुई जिसका अर्थ है 'ज्ञान प्राप्त करना' | भारत में ज्ञान की देवी माँ सरस्वती की पूजा की जाती है | किन्तु विद्वानों की मान्यता हैं कि हम माँ सरस्वती की पूजा इसलिए नहीं करते हैं क्योंकि वह ज्ञान की देवी हैं बल्कि इसलिए करते हैं की यें स्वरों की भी देवी है और यें निरंतरता से वीणा वादन का अभ्यास भी करती है | इससे सिद्ध होता है कि हमारे देश की संस्कृति और ज्ञान की परम्परा इतनी महान हैं कि यहाँ ज्ञानार्जन के साथ-साथ ज्ञान की पुनरावृत्ति पर भी अधिकाधिक ध्यान दिया जाता है |

अब हमें 'परम्परा' शब्द का अर्थ गहराई से जानना होगा | साधारण शब्दों में हम कह सकते हैं कि 'बिना व्यधान के शृंखला के रूप में जारी रहना ही परंपरा कहलाती है' | 'मौखिक रूप से गुजरने वाले रीति-रिवाजों और संस्कारों की मौखिक 'रिपोर्ट' यानी परम्परा' | 'परम्परा सामाजिक विरासत का अभौतिक अंग है' | 'रिवाजों का चला आता हुआ क्रम, सिलसिला इत्यादि ही परम्परा कहलाती है' | 'परम्परा एक सामजिक प्रथा है, जो सामाजिकरण की प्रक्रिया द्वारा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित होती है' | 'परम्परा संस्कृति को अक्षुण्य बनाये रखने का साधन है'| डॉ. नगेन्द्र के अनुसार—"व्यापक अर्थ में ट्रेडिशन का अभिप्राय उन सभी रुढियों, साहित्यिक युक्तियों तथा अभिव्यंजना की रीतियों से हैं जो किसी लेखक को अतीत के रूप में मिली हो | किसी विशिष्ट युक्ति की जैसे सुखमय अंत की, परम्परा की बात हम कर सकते हैं: जैसे प्रबंध काव्य की, किसी युग की परम्परा की चर्चा कर सकते हैं जैसे रीति परम्परा | सांस्कृतिक सन्दर्भ में हम भारतीय परम्परा की बात भी कर सकते हैं| या फिर हम कह सकते हैं कि विकास की वह मूल धारा जो अतीत से सीधी हम तक चली आई है | वही परम्परा है | इस अर्थ में हम इस शब्द का प्रयोग प्रशंशा के निमित्त भी कर सकते हैं ; जैसे-प्रसाद भारत के साहित्य की महान परम्परा के प्रतिनिधि हैं | क्योंकि प्रत्येक लेखक चाहे वह छोटा हो या बड़ा, अपनी एक विशिष्ट परम्परा लेकर ही आगे बढ़ता है | भाषा तो उसे दाय के रूप में मिलती ही है | इसका अर्थ यह है कि वह शून्य से आरम्भ नहीं करता | आज तक उसने जो कुछ देखा, सुना या भोगा, वह सब कुछ उसकी रचनाओं में परिलक्षित अवश्य होगा | किन्तु यह भी उतना ही सत्य है कि कोई भी लेखक अपने अनुभवों को साझा करते वक़्त उनमें कुछ जोड़ता है या निकालता है | परिवर्तन प्रकृति का नियम है | इसी के अनुसार हर एक चीज में परिवर्तन

होना स्वाभाविक है | भाषा, शैली और सम्पूर्ण रचना में भी | इसीलिए अतीत जुड़ता भी है और छुटता भी |

सारांश में हम यही कहेंगे कि लेखक का श्रेय इसी में है कि वह अपने युग की आवश्यकताओं के आलोक में परम्परा के यथोचित अंशों का ग्रहण व त्याग करे | इससे एक ओर तो वह परम्परा से विछिन्न होकर भटकने भी ना पायेगा और दूसरी तरफ वह नयी दिशाओं का अनुसंधान भी कर सकेगा |"(२) विख्यात समाजशास्त्री प्रोफेसर योगेन्द्र सिंह के अनुसार—"परम्परा किसी समाज की संचित विरासत है, जो सामाजिक संगठन के समस्त स्तरों पर छाई रहती है |"(३) अज्ञेय के अनुसार—"क्योंकि ऐतिहासिक परम्परा कोई पोटली बाँध कर रखा हुआ पाथेय नहीं है, जिसे उठाकर हम चल निकले | परम्परा वह रस हैं, जिसे हम बूंद-बूंद अपने अंदर संचय करते हैं, या नहीं करते हैं अथवा कोरे रह जाते हैं |"(४) निर्मल वर्मा के अनुसार—"संकट की घडी में अपनी परम्परा का मूल्यांकन करना एक तरह से खुद अपना मूल्यांकन करना है, अपनी अस्मिता की जडों को खोजना है | वह चीज जिसे हम परम्परा कहते हैं और कोई चीज ना होकर सिर्फ अपने भीतर इस धारा की निरंतरता का बोध है |"(५) वि. के. आर. राव के अनुसार—"परम्परा से अभिप्राय उन आदतों से, रिवाजों से, रुझानों से तथा जीवन शैलियों से हैं जो सामजिक संस्थानों में अवतरित होती है, और संस्थानों की स्थिरता व स्वायत्तता के अस्तित्व के कारण जड़ें जमा लेती हैं |"(६)

भारत की पहचान हमेशा से ही एक ज्ञान भण्डार, ज्ञान संस्कृति तथा ज्ञान परम्परा से होती रही है | ज्ञान के क्षेत्र में अगर गहराई से अवलोकन करेंगे तो पायेंगे कि कई प्राचीन सभ्यताएं भारत का ऋण मानती रही है | ना सिर्फ प्राचीनकाल में अपितु सदैव ही भारत ने ज्ञान का निर्यात दूसरी सभ्यताओं और संस्कृतियों में किया है | जेहन में प्रश्न तो अनेकानेक उभरते हैं...ऐसा क्यों है...? भारत ही एकमात्र ऐसा देश क्यों है... जो ज्ञान परम्परा के लिए स्थापित हुआ है ...? ऐसे कौनसे मापदंड या दृष्टिकोण हैं जिनके कारण भारत की ज्ञान परम्परा इतनी प्रचलित है | क्यों भारत को जगत गुरु कहते हैं..? कैसे भारतीय ज्ञान परम्परा अद्वैत का परक है...?

इस बात को हम सभी जानते हैं कि भारत पर सभ्यतागत आक्रमणों में एक बड़ा आक्रमण 'यहाँ की ज्ञान परम्परा' पर भी हुआ था | भारतीय ज्ञान परम्परा का सबसे बड़ा आधार वेद माना जाता है | और इसीलिए अंग्रेजों सहित समस्त यूरोपीय बौद्धिक जगत ने वेदों को निरर्थक सिद्ध करने के लिए एडी-चोटी का जोर लगाया था | वेदों को तुच्छ बताने के लिए इनके द्वारा किये गए कुछ प्रयासों के उदहारण प्रस्तुत है—"वेद तो चरवाहे तथा गडरिये आर्यों के लिए लिखे गए गीत मात्र हैं | इनमें ना तो किसी प्रकार का दर्शन है और ना ही विज्ञान | वैदिक साहित्य को विभिन्न तरीकों से कचोटा गया | वेदों में वर्णित प्रकृति के रहस्यों को अश्लीलता, चरित्रहीनता और अनर्गल प्रलाप बताया है | इन सब बातों का प्रभाव वैदिक सनातन समाज पर गंभीरता से हुआ था, जिसे हम सभ्यतागत आक्रमण भी कह सकते हैं | भारतीय ज्ञान परम्परा पर हुए इस सभ्यतागत आक्रमण का का सामना भी वैदिक समाज ने डट कर किया | वैदिक ज्ञान पर लगे हुए आरोपों का खंडन करने के लिए विपुल मात्रा में वैदिक साहित्य की रचना हुई | इसी साहित्य में से एक प्रसिद्द पुस्तक है 'वैदिक सम्पति' | जिसके लेखक हैं "पंडित रघुनन्दन शर्मा" | यह पुस्तक १९३२ में लिखी गई थी | आज से ८८ वर्ष पूर्व लिखी गयी इस पुस्तक में जो-जो बातें कही गयी है वे सभी आज भी प्रासंगिक हैं और प्रामाणिक भी उतनी ही हैं | वेदों पर लगाये गए आक्षेपों का उत्तर देने के लिए लेखक ने क्रमबद्धता से आधुनिकता, विज्ञान और इतिहासकारों पर ऐसे अनूठे प्रश्न उठाये जो आज भी अनुत्तरित और महत्वपूर्ण बने हुए हैं | सचमुच पुस्तक में बहुत से विषयों पर प्रामाणिक, अधिकृत और शोध परक जानकारी दी हैं | विषयों की बहुलता को देखते हुए यह बात असंभव सी जान पड़ती है कि कैसे एक लेखक इतने सारे विषयों का इतना गहरा ज्ञान रख सकता है...? और इस ज्ञान के जरिये इतने विषयों पर अधिकार पूर्वक लिखना अविश्वसनीय सा प्रतीत होता है | और उसी क्षण हमारे मन में इस अनूठी पुस्तक के अनूठे लेखक के लिए स्वाभाविक श्रद्धा जाग उठती है | सचमुच यह पुस्तक भारतीय ज्ञान परंपरा की जबरदस्त कुंजी हैं | इसमें भारतीय ज्ञान और वैदिक साहित्य पर लगाये गए समस्त आक्षेपों का निराकरण दिया गया है, साथ ही आधुनिक विज्ञान और इतिहासकारों के समक्ष प्रश्न भी रखे गये, जो आज तक अनुत्तरित हैं |

वैदिक संस्कृति विश्व में प्रथम और श्रेष्ठ है, इसीलिए इसे 'विश्वरणीय' संस्कृति कहते हैं | वेदों के अनुसार किया जाने वाला कार्य, व्यवहार और आचरण ही मानव संस्कृति कहलाती है | वेदों में मनुष्य जीवन के सभी पक्षों पर प्रकाश डाला गया है | वेदों के आधार पर ही मनुष्यों में आज भी सोलह संस्कार होते हैं | इन संस्कारों का उद्येश्य मानव को समुन्नत करना है | मनुष्य एक भौतिक शरीर, चेतन, अनादी, नित्य, अजन्मा व अमर आत्मा का युग्म है | हमारे जीवन का उद्येश्य शारीरिक जीवन के साथ-साथ

बौद्धिक, मानसिक, आत्मिक व सामाजिक उन्नति भी करना है | शरीर की उन्नति अच्छे खान-पिन से होती है और बौद्धिक, मानसिक व आत्मिक उन्नति ईश्वर उपासना, अनेकानेक सूसंस्कारों से, वेद-विद्या के अर्जन, अभ्यास व तदनुकूल सदाचरण से होती है | यह भी हमें समझना चाहिए कि आज भारतीय समाज अनेकानेक अंधविश्वासों, अज्ञान मूलक कृत्यों अनावश्यक रुढियों तथा रीति-रिवाजों, पर्व व कर्म-कांडो के साथ पाखंडों में भी लीन हुआ हैं | आज भारतीय समाज मूर्ति पूजा, अवतारवाद, ऊँच-नीच व जन्मजात के भेद भाव से ग्रस्त हुआ है | शिक्षा व्यापार बन चुकी है | भारतीय ज्ञान परंपरा ने दम तोड़ दिया है, इस बात को कोई नहीं जानता है और किसी को भी कुछ भी खबर नहीं है | नैतिक मूल्यों की समाप्ति होचुकी हैं | भारतीय आदर्श संस्कृति किसी कोने में दुबकी बैठी है | आज चारों तरफ हाहाक़र मचा हुआ है | वैदिक संस्कृति की सिसकियाँ सुनाई दे रही है | यह हमारा दुर्भाग्य हैं कि हम संस्कृति और संस्कृत से दूर बहुत दूर निकल चुके हैं | हमें स्वयं को पता नहीं कि आखिर हम जा कहाँ रहे हैं...? हम क्या प्राप्त करना चाहते है..? हमारे उद्येश्य से भटके हुए, स्वार्थ में डूबे हुए, अज्ञानता के कारण मत व सम्प्रदाय के आचार्य अपनी मिथ्या मान्यताओं व सिद्धांतों को छोड़ना नहीं चाहते, जिससे सारे विश्व में अशांति फैली हुयी हैं | वे आजकल के मत-मतान्तरों की मिथ्या बातों को व उनसे निर्मित झूठी परम्पराओं को ही संस्कृति कहने लगे हैं | लेकिन यह असत्य है | यह सब अज्ञानता के कारण होता है | आज स्थिति इतनी भयावह है कि भारतीय ज्ञान परम्परा को जन-जन में फिर से लाने की आवश्यकता है | तभी भारतीय समाज व मनुष्यता का बचाव हो सकता है | सिद्ध होता हैं कि आज वैदिक मान्यताओं व सिद्धांतों के प्रचार-प्रसार की अत्यधिक आवश्यकता है, जिससे मनुष्य मात्र को अपने कर्तव्यों का ज्ञान हो सके | दुःख की बात यह हैं कि न सिर्फ हम अपनी भारतीय ज्ञान परम्परा से एकदम अनजान हैं बल्कि इसे हिन भी समझते हैं | समाज में एक कहावत है— 'अपनी माँ को कोई भद्दा नही कहता' किन्तु हम इतने नाकारी संतान होगये हैं कि हमारी स्वयं की भारतीय ज्ञान परम्परा को हम हेय व संदेह की दृष्टि से देखने लगे हैं | भारतीय ज्ञान की सभी बातों को , वेदों में लिखे सभी संदेशों को गल्प मानकर उस पर बात ही नही करना चाहते हैं | दरअसल औपनिवेश मानसिकता ने हमें भ्रम में बाँध रखा है कि भारत सपेरों व गडरियों का देश हैं और ज्ञान-विज्ञान तो पश्चिम में फैला हैं|

"आज की भयावह स्थिति और भारतीय ज्ञान परम्परा की आवश्यकता."

आज युवाओं की प्रवृत्ति जोड़ने के बजाय तोड़ने की बनी है | वे दिन पर दिन हिंसक तथा आक्रमक बनते जा रहे हैं | हालांकि हम सभी जानते हैं कि हिंसक होने का अर्थ विचारहिन अथवा दिशाहिन होना है | सही दिशा के अभाव में भारत राष्ट्र के युवा इसी विचारहीनता के शिकार हुए हैं | ये दिशाहीन युवक दर-ब-दर भटक रहे हैं | गलत रस्ते पर चलकर स्वयं को, परिवार को, समाज को और सम्पूर्ण राष्ट्र को बर्बाद कर रहे हैं | ऐसे में सोचों की समाज व राष्ट्र कितना बेसहारा हो जायेगा, "क्योंकि युवाओं की शक्ति अथाह होती हैं और उस शक्ति का सदुपयोग राष्ट्र नही क्र सकेगा |" आज विद्यार्थी, विद्यार्थी ना रहकर राजनेता के शतरंज का मोहरा बन गया है | राजनेता भी इतने भ्रष्ट होगये हैं कि उनके सिद्धांतों और तत्वों में आदर्श, ईमानदारी और राष्ट्र प्रेम नदारद होगये हैं | ये अब वंशवाद और अव्यवहारिक सिद्धांतों पर ही अपना भोंपू बजा रहे हैं | इसीलिए अब समय आ गया हैं कि राष्ट्र निर्माण में चाणक्य को याद किया जाए | हम कह सकते हैं कि "आओं...अब लौट चले...भारतीय ज्ञान परम्परा की ओर |

विद्या मंदिरों में जीवन मर्म के पाठ गायब होगये हैं | पहले से ही आक्रमक और हिंसक हुए विद्यार्थी को ज्ञान के नाम पर जो कुछ परोसा जा रहा है, उससे भारत की दुर्दशा हम सब से ज्यादा दूर नही है | हमारा बुद्धिजीवी वर्ग जिन शोषितों-पीढ़ीतों के हित की बात करता है, और उनके लिए जो सिद्धांत अपनाता हैं... क्या उनसे आज तक कोई शोषित या पीढ़ीत संतुष्ट हो सका...? सही मायने में इनकी संतुष्टि के नाम पर ये बुद्धिजीवी वर्ग के लोग मोटा वेतन और मोटा मानधन लेलेते हैं | आज अगर हम देखेंगे तो पाएंगे कि बुद्धिजीवी वर्ग ही ज्यादा से ज्यादा असंतुष्ट है | शोषित आज भी शोषित ही बना हुआ है, वह आज भी अपने परिवार के लिए दो वक़्त की रोटी के लिए मर-खप रहा है | सबसे अधिक किसान वर्ग की परेशानी है | जो तब से अब तक कभी प्रकृति से तो कभी भ्रष्ट और बदहाल राजनीति से जूझ रहा है | इनकी हालत "मार खा—रोई नही" जैसी है किसानों व श्रमिकों की हालत देखकर ऐसा लग रहा है मानों "पेट-पीठ दोनों मिलकर हैं एक, चल रहा लकुटिया टेक |"(७) आखिर....यह बदहाली कब समाप्त होगी हमारे देश की...? आज के हालात में 'हमारे मन मस्तिष्क से और विचारों से गायब होता देश' 'देश की क्षणजीवी परिस्थिति' की अनुभूति' (खस्ता हालत) और 'दीन-हिन् गाँव किसान' ये सब चिंता और चिंतन के विषय बने हुए हैं |इन विषयों की समस्यायें अगर कुछ अंश में भी चुदाना है तो हमें प्राचीन भारतीय ग्रन्थ ज्ञानानुशासन, शांति, सहनशीलता, परोपकार, धर्म पारायणता के साथ-साथ

कर्मवादिता के सन्देशों को फिर से गले लगाना होगा | हम इतने महान देश के वासी हैं जहाँ युद्ध के कुछ क्षण पूर्व भी युद्ध से बचने-बचाने की कोशिश – कवायद की जाती है...| शायद ही विश्व के किसी देश में ऐसा होता होगा | निश्चय ही हमें फिर से हमारे ग्रंथों और हमारी ज्ञान परम्परा की ओर लौटने की सख्त जरूरत है |

और अंत में.....

भारतीय ज्ञान परम्परा में शिक्षा को भी बहुत महत्व दिया जाता था | गुरु को हम ब्रम्हा,विष्णु और महेश से भी बढकर सम्मानीय समझते थे | इसीलिए तो कबीरदासजी ने कहा है — "गुरु, गोविन्द दोउ खड़े काको लागू पाय || बलिहारी गुरु आपणा गोविन्द दियो बताय ||" उस समय गुरु के दों भेद होते थे—(१) शिक्षा गुरु (२) दीक्षा गुरु | जो विद्वान केवल शास्त्र सिखाएं, वह शिक्षा गुरु और जो सू-संस्कारों के साथ आचार-विचार भी सिखाएं, वह दीक्षा गुरु कहलाता है | दुर्भाग्यवश अब ये सब कुछ लुप्त होगया है | अब ज्ञान का नाम, काम और परिणाम सभी कुछ बदल गया है | अब ज्ञान को शिक्षा कहने लगे हैं | और अब हम शिक्षा सिर्फ इसलिए लेते हैं ताकि हम परीक्षा उत्तीर्ण कर सके | जैसे-तैसे परीक्षा उत्तीर्ण करके बड़े वेतन की नौकरी मिल जाये...बस यहीं उद्येश्य रह गए हैं, आज की शिक्षा के | पिछले कई दिनों से व्यावसायिक पाठ्यक्रम निकले है जिनकी तगड़ी फीस भी वसूली जाती है, लोग फीस भी देते हैं क्योंकि यह पास करने के बाद तगड़ा पॅकेज मिलता है | विदेशों से संचालित कम्पनियों में हम दिन-रात काम करके भले ही अंतर्मन से नाखुश हो फिर भी मोटा वेतन लेने की संतुष्टि भर हमें रहती है |जीवन की यही दौड़ सभी तरफ लगी है | आरम्भ से अंत तक हमने इतने पैसे खर्च करके जो शिक्षा ग्रहण की उसमे लेश मात्र भी ज्ञान नही है सिर्फ किताबी बातें हैं जो सिर्फ परीक्षा में लिखने भर के लिए याद रहती हैं| एक समय था जब हमारे देश के विश्वविध्यालय इतने प्रसिद्द थे कि यहाँ पढने के लिए विदेश के लोग लालायित रहते थे | और आज ऐसा समय आया है की हम ढेरों पैसे देकर विदेश में शिक्षा लेने जाते हैं, भले ही वो विदेशी लोग हमारा अपमान करे | अब न तो भारतियों के कोई ठोस आदर्शात्मक उद्येश्य रह गये हैं और ना ही भारतीय शिक्षा के| हम अगर प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा का गहराई से अध्ययन करेंगे तो जानेंगे की वैदिक साहित्य में शिक्षा से सम्बंधित अनेक सूक्तियां और ऋचाएं सन्निहित हैं| तैत्तरीय उपनिषद में "शिक्षावल्ली" नामक एक अध्याय अलग से प्राप्त होता है | जिसमें शिक्षा को छः वेदांगों में से एक माना गया है | प्राचीन भारत में ज्ञान का इतना अधिक महत्व था कि ईश्वर का अवतार माने जाने वाले श्री राम व श्री कृष्ण ने भी गुरुकुल में जाकर शिक्षा ग्रहण की थी / ज्ञान अर्जित किया था | अत्री ऋषि और देवी अनुसूया के पुत्र अवधूत दत्तात्रेय ने भारत में एक विशिष्ट ज्ञान परम्परा निर्मित की थी | इन्होनें अपने आस-पास के सभी जीव जंतु, स्थिर चीजे और प्रकृति के सभी तत्वों को अपना गुरु माना था | इस तरह से दत्तात्रेय के २४ गुरु बताये गए हैं | इनमेस कुछेक के बारे में हम बताएँगे | –पृथ्वी-से हम सीख सकते हैं कि हमें किसी भी परिस्थिति में धैर्य धारण करना चाहिए | जिस तरह से पृथ्वी पर दिन-रात अनेकानेक उत्पात होते रहते हैं... फिर भी क्या हमने कभी पृथ्वी को क्रोधित होते हुए या चीखते-चिल्लाते हुए देखा हैं..? इसी तरह मनुष्य को भी आक्रमणकारी के सम्मुख क्रोध ना करते हुए धैर्य से यह सोचना चाहिए कि दुश्मन को मात किस तरह से किया जा सकता है..? वायु-शरीर में स्थित प्राणवायु आहार पाने की इच्छा रखती है, और उसे पाकर संतुष्टि के रूप में मुहँ के द्वारा बाहर भी निकल जाती है जिसे हम डकार कहते हैं |

इसका तात्पर्य यह है कि जिसमें मात्र संतुष्टि होजाये वही खाया जाये, उतना ही खाया जाये जिसमें संतुष्टि होजाए | शरीर के बाहर रहने वाली वायु से यह ज्ञान मिलता है कि वह चाहे कहीं भी रहे, कभी किसी से ज्यादा आसक्ति ना रखे | आकाश-जिस तरह से आकाश में अनेकानेक भौगोलिक घटनाएं घटित होने के बावजूद भी आकाश अविचल रहता है, स्थिर रहता है | इसी तरह हमें भी किसी भी दुर्घटना या घटना में अविचल रहना चाहिए | जल-जल की तरह हमें भी हरदम तरल और सरल रहना चाहिए | मन में कभी भी किसी के लिए भी कपट की गांठे नहीं रखना चाहिए | जिस तरह जल अपनी मधुरता से सभी की प्यास को बुझाकर उन्हें संतुष्ट करता है उसी तरह हमें भी मधुर व्यवहार करके सभी को प्रसन्न रखना चाहिए | अग्नि-अग्नि सदैव तेजस्वी और ज्योतिर्मय होती है | यह सर्वभक्षी होते हुए भी निर्लिप्त हैं | इसके पास संग्रह वृत्ति नही है | इसी तरह हमें भी जितना जीवन-यापन के लिए चाहिए उतना ही अन्न और धन रखना चाहिए | संग्रह की वृत्ति से मन में अनेक प्रकार के लालच आते हैं और मनुष्य पाप करने लगता है | और अंत में दुःख ही पाता है | जिस तरह अग्नि टेढ़ी-मेढ़ी लकड़ी से प्रज्वलित होकर भी सीधी लो में उपर जाती है उसी तरह हमें भी हमारे जीवन के टेढ़े-मेढे रास्तों से होकर भी सदैव उन्नति ही करते रहना चाहिए | चंद्रमा-समय के प्रभाव से दिखावी तौर पर चन्द्रमा की कलाओं में परिवर्तन आता है, किन्तु फिर भी असल में चंद्रमा न तो घटता है और ना ही बढ़ता है | इसी तरह मानव शरीर यह छोटे से बड़ा, सशक्त से विकृत और सश्वर से नश्वर होता है किन्तु आत्मा असल में ना तो जन्मती ना मरती है, ना छोटी रहती है और

ना ही बड़ी होती है, न सशक्त रहती है और नाही विकृत होती है | फिर हम इस नश्वर शारीर के लिए इतने पापों का बोझ क्यों ढोते हैं..? हमें भी स्थिरता इस तत्व को जीवन में लाना चाहिए | सूर्य- सूर्य अपनी किरणों से जल खिचता है और समय आने पर उस जल को फिर से बरसा भी देता है | इसी प्रकार मनुष्यों को चाहिए कि इन्द्रियों द्वारा अनुकूल चीजों को ग्रहण करे और समय आने पर उनको वापस लौटा भी दे | आत्मा और सूर्य एक समान है | जैसे सूर्य की रौशनी अलग-अलग पात्रों में अलग-अलग आकर की दिखाई देती है उसी तरह अलग- अलग शरीर में आत्मा भी अलग-अलग आकार की दिखती है | समुद्र-मनुष्य को सदैव समुद्र के समान प्रसन्न, गंभीर, अथाह, असीम व अपार बनाना चाहिए | इस ज्ञान परंपरा में यह भी बताया है कि प्रत्येक सिक्के के दों पहलू होते हैं | अगर किसी में सदगुण हैं तो दुर्गुण भी अवश्य रहते हैं, यह हमें सोचना है कि किससे क्या लिया जाये...? समुद्र में ज्वर-भाटा या रौद्र तूफ़ान आता है उसी तरह हमें उत्तेजित नही होना है | कबूतर-दत्तात्रेय ने एक बार देखा कि कबूतर का जोड़ा दाना-पानी लेने गया तब तक शिकारी के जाल में उसके बच्चें फंस गये यह देख कर मोह और आसक्ति से ग्रसित कबूतर के जोड़े ने भी जाल में आकर अपनी जान देदी | इस बात से हमें यह सीखना चाहिए कि जीवन में किसी से भी इतनी आसक्ति या मोह ना रखे कि उनके लिए हमारी जान भी देनी पड़े | मधुमक्खी-जिस तरह से मधुमक्खी सभी फूलों का सार इकट्ठा कर उससे मधुर रस के रूप में शहद बनाती है | उसी तरह हमें भी सभी से अच्छी बातें सीखनी चाहिए | और सभी से मधुरता से व्यवहार करना चाहिए | पिंगला नामक वैश्या-पिंगला नामक वैश्या ने अपने व्यवसाय में निराश होकर वैराग्य को अपनाया था | इससे हमें यह सिख मिलती हैं कि "आशा हि परमं दुखम, नैराश्य परमं सुखम" आशा का परित्याग करने पर ही वैराग्य का सुख मिलता है | समूह, झुण्ड या परिवार में रहने से कलह होना स्वाभाविक है | इसलिए एकांतवास में ही साधना संभव है

दत्तात्रेय के इन गुरुओं के उदाहरणों से भारतीय ज्ञान परंपरा का आधारभूत दर्शन सम्मुख आता है | इन बातों से हमें यह भी सीखना चाहिए कि काम जब तक समाप्त न हो, काम से चित्त हटना नहीं चाहिए और लक्ष्य वेध पर ध्यान केन्द्रित करने से ही हमें सफलता मिलती है अन्यथा जीवन भर के प्रयत्न विफल होजाएंगे | ज्ञान प्राप्त करने के लिए उन्मुक्त भाव, पूर्वाग्रह से मुक्त मन और शुद्ध दृष्टि होना अत्यंत आवश्यक है |

सन्दर्भ सूची

(१) ज्ञान की सभी परिभाषाएँ—अंतर्जाल से
(२) डॉ. नगेन्द्र—मानविकी पारिभाषिक कोश साहित्य खंड
(३) योगेन्द्र सिंह—ट्रेडिशन एंड मॉडर्निटी इन इंडिया—पृष्ठ संख्या ५२
(४) अज्ञेय—आत्मनेपद—पृष्ठ संख्या १०२
(५) निर्मल वर्मा—पत्थर और बहता पानी—पृष्ठ संख्या २३
(६) श्रीवास्तव एस. के. एडिटर—ट्रेडिशन एंड मोडरनायज़ेशन प्रोसेस ऑफ़ कंटीन्युटी एंड चेंज इन इंडिया पृष्ठ संख्या १६२
(७) दत्तात्रेय की विशिष्ट ज्ञान प्रणाली—अंतर्जाल से